भारतीय कला, संस्कृति और धर्म

निशा रानी
शोधार्थिनी
जैन कन्या पाठशाला स्नात्कोत्तर महाविद्यालय
मुजफ्फर नगर (उ.प्र.)
Email: rajputnishaartist@gmail.com

सारांश:

भारत बहुभाषी और बहुधर्मी होने के बावजूद यदि एकात्म की बात करता है और यहां के लोगों में आपसी सामंजस्य नजर आता है तो उसका मुख्य कारण यहां की संस्कृति ही है जो सभी को जोड़कर रखती है। भारतीय संस्कृति के संवर्धन और संरक्षण में कलाओं का महत्वपूर्ण योगदान है। भारत में सभी धार्मिक मान्यताएं तमाम कलाओं को भी मान्यताएं देती हैं। भारत प्राचीन काल से ही कला और हस्तशिल्प के माध्यम से न सिर्फ अपनी संस्कृति को उन्नत बनाता रहा है बल्कि कुटीर उद्योगों को भी बढ़ावा देता रहा है। भारत के प्रत्येक वर्ग में कला का महत्वपूर्ण स्थान है। यह भी कहा जा सकता है कि भारत का समाज कला प्रधान समाज है। यहां लोक और जनजातीय कला मिट्टी के बर्तन, पेंटिंग, धातुकर्म, कागज–कला, बुनाई, आभूषण, खिलौने, काष्ठ, भवन, सूप, सभी आवश्यक वस्तुओं में कलात्मकता नजर आती है। यह कलात्मकता किसी वस्तु को न सिर्फ सौंदर्यता प्रदान करती है बल्कि उस वस्तु को सकारात्मकता प्रदान करते हुए सजीव बना देती है, और इस कृत्य में तकनीक एवं प्रयुक्त सामग्री का बड़ा योगदान होता है। भारतीय संस्कृति विश्व में सबसे प्राचीन संस्कृति है। यह संस्कृति एक दिन में नहीं जन्मी बल्कि इसकी सनातन परंपरा रही है, इसीलिए भारतीय संस्कृति को सनातन संस्कृति भी कहा जाता है। यह संस्कृति अनेक बड़े बाहरी हमले झेलने के कारण विभिन्न धर्मों, समुदायों से प्रभावित है। अपनी तमाम जटिलताओं के बावजूद दुनियाभर में मात्र भारतीय संस्कषति में ही यह गुण है कि यह विभिन्न संस्कृतियों और धर्मों को स्थान देते हुए अपनी क्षमता को ऐसे बढ़ा लेती है कि जो कमियां प्रकट होने लगें वह खूबियों में नजर आने लगती हैं। भारत की संस्कृति अपने परम्परागत अस्तित्व के साथ बनी हुई है। उदारता तथा समन्यवादी गुणों के कारण भारतीय संस्कृति ने अपने अस्तित्व को सुरक्षित रखा है। यह बात सही है कि बाहरी आक्रमणों से भारतीय

Reference to this paper should be made as follows:

निशा रानी

भारतीय कला, संस्कृति और धर्म

Vol. XV, Sp. Issue
Article No. 11
pp. 078-84

Online available at https://anubooks.com/journal/journal-globalvalues

DOI: https://doi.org/10.31995/jgv.2024.v15iS1.011

जनजीवन को बहुत अधिक हानि हुई है। तमाम भवन और मन्दिर तोड़े गए जहां भारतीय कलाओं को संजोकर रखा गया था। कई स्थानों को दैवीय आपदाओं के कारण मार झेलनी पड़ी है। परंतु इन सबके बावजूद आज भी भारतीय संस्कृति समाप्त नहीं हो सकी है। भारत के महान बनने में भारत की संस्कृति, कला और धर्म का बड़ा योगदान है। ऐसा प्रतीत होता है कि संस्कृति, कला और धर्म ही भारत की आत्मा है जो भारत रूपी शरीर में वास करती है।

मुख्य शब्दः

कला, संस्कृति, धर्म, भारत, परंपरा, रीति–रिवाज

प्रस्तावना

भारत, श्रीनगर से लेकर कन्याकुमारी तक अनेक भौगोलिक परिस्थितियों, संस्कृतियों और धर्मों की विविधता का विशाल लोकतांत्रिक देश है। भारतीय संस्कृति में कला और धर्म का बड़ा महत्व है। भारत बहुभाषी और बहुधर्मी होने के बावजूद यदि एकात्म की बात करता है और यहां के लोगों में आपसी सामंजस्य नजर आता है तो उसका मुख्य कारण यहां की संस्कृति ही है जो सभी को जोड़कर रखती है। भारतीय संस्कृति के संवर्धन और संरक्षण में कलाओं का महत्वपूर्ण योगदान है। भारत में सभी धार्मिक मान्यताएं तमाम कलाओं को भी मान्यताएं देती हैं। भारत प्राचीन काल से ही कला और हस्तशिल्प के माध्यम से न सिर्फ अपनी संस्कृति को उन्नत बनाता रहा है बल्कि कुटीर उद्योगों को भी बढ़ावा देता रहा है। हथकरघा, रेशम, बेंत और बांस की वस्तुएं, गलीचों की बुनाई, काष्ठ शिल्प, पीतल आदि धातुओं के शिल्प आदि कला और हस्तशिल्प पर आधारित प्रमुख कुटीर उद्योग हैं। इसी प्रकार चित्रकला की बात करें तो भारत इस क्षेत्र में भी अग्रगण्य ही रहा है। हालांकि कुछ विद्वान मानते हैं ''भारत की चित्रकला का i wkZØec) bfrgkl vHkhrd miyC/kugha gSA''[1] मगर फिर भी उदाहरण के रूप में देखें तो तंजौर की कला और लोक कला को देखें तो यहां बड़ी ही संपन्न परंपरा के दर्शन होते हैं। यहां की प्रसिद्धि चित्रकला और पारंपरिक कला के रूप में विख्यात है। तंजौर की कला ने देश को विश्व स्तर पर कला क्षेत्र में स्थापित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। तंजौर कला में धार्मिकता और पौराणिक वृत्तांत मुख्य विषय होने के कारण यह सांस्कृतिक और धार्मिक महत्व को समझाने में सफल है। तंजौर की चित्रकला में कला और शिल्प दोनों के मिश्रित रूप के दर्शन होते हैं जिनमें हिन्दू देवी–देवताओं को मुख्य विषय के रूप में रखा जाता है। ''चित्रकला का इतिहास मूर्तिकला से भी प्रचीन है। संसार में विभिन्न भागों में इस प्रकार के चित्र मिले हैं। इनके विषय, शैली तथा सामग्री संसार भर में एक–दूसरे से मिलते–जुलते हैं। इनके विषय मुख्यतः पशु, पक्षी, पशुओं का आखेट करते हुए मानव, परस्पर युद्ध करते हुए मनुष्य, पूजनीय देवी–देवता इत्यादि हैं।''[2] वास्तुकला की बात करें तो गुजरात की वास्तुकला शैली दुनियाभर में विख्यात है। सोमनाथ, द्वारका, घुमली, गिरनार, मोधेरा, थान आदि अनेक ऐसे पौराणिक पवित्र स्थल हैं जहां उत्तम प्रकार की वास्तुकला के दर्शन होते हैं। पाटन का रेशमी वस्त्र पटोला, इदर के खिलौने, कोनोदर का हस्तशिल्प, अहमदाबाद और सूरत में घरेलू मंदिरों का काष्ठशिल्प कला के बेहतरीन केन्द्र तो हैं ही परंतु पौराणिक मूर्ति कला और संस्कृति को भी संजोए हुए हैं। अगर नृत्य की बात करें तो भारत में शास्त्रीय नृत्य शैली भरतनाट्यम को विशेष स्थान दिया जाता

है। हिन्दू धर्म से अलग अन्य धर्मों की बात करें तो मुस्लिम शासन के समय भारत में अपनी तरह की एक विशेष इस्लामी शैली विकसित हुई है। जिसके दर्शन दिल्ली नगर के प्राचीन भवन जो कि सल्तनत काल में निर्मित हुए थे उनकी संरचना व अलंकरण से ही पता चल जाता है। इन भवनों में प्राकृतिक रुपाकंनों, सर्पाकार बेलों और कुरान के अक्षरों के घुमाव से कुशल कारीगरी की गुणवत्ता का पता चलता है। इन इमारतों को घोड़े के नाल की आकृति वाली मेहराबें, जालीदार खिड़कियां, बेल बूटे अत्यन्त भव्यता प्रदान करते हुए नजर आते हैं। भारत में प्रमुख कलात्मक स्मारकों को प्रेरित करने वाला काल बौद्ध काल माना जाता है। ऐसा माना जाता है कि बौद्धों ने पहाड़ों में चट्टानों को काटकर गुफाएं बनायीं। उन्हीं के बाद हिंदुओं और जैनियों ने एलोरा, एलीफेंटा और मामल्लापुरम आदि स्थानों पर भव्य गुफाओं का निर्माण किया। एलोरा ''जैन गुफाओं के अन्तर्गत चौबीसवें तीर्थंकर महावीर जी की चतुर्भुजी मूर्ति प्रतिष्ठित है। इस समूह में एक गुफा मन्दिर 'इन्द्र सभा' और दूसरा 'जग्न्नाथ सभा' अधिक प्रसिद्ध हैं। इनके द्वार की शिल्प–कला कैलाश मन्दि के द्वार से मिलती–जुलती है।''[3] भारतीय गुफा कला में विभिन्न धर्मों में एक समान कलात्मक शैली समानता और उच्च्च वैचारिकता के दर्शन कराती है। यह भी संभव हो सकता है कि भारतीय गुफाओं को बनाने वाले कलाकारों का संबध किसी एक विशेष स्थान से रहा हो। इतिहासकार बताते हैं कि बौद्ध कला पहली बार पहली शताब्दी ईसा पूर्व के आसपास गांधार काल और अमरावती काल के समय विकसित हुई थी। यही कला बाद में गुप्त काल और पाल काल में भी फलती–फूलती रही। कला की दृष्टि से इस काल को भारत का स्वर्ण काल कहा जा सकता है। बाद में पल्लव, चोल, होयसल और विजयनगर साम्राज्य जैसे हिंदू राजवंशों ने भी कला की अपनी शैली विकसित की। कहा जा सकता है कि ''कला का अनुभव मनुष्य की प्रारंभिक अवस्था में ही शुरू हो जाता है।''[4]

भारत के प्रत्येक वर्ग में कला का महत्वपूर्ण स्थान है। यह भी कहा जा सकता है कि भारत का समाज कला प्रधान समाज है। यहां लोक और जनजातीय कला मिट्टी के बर्तन, पेंटिंग, धातुकर्म, कागज–कला, छापा कला, बुनाई, आभूशण, खिलौने, काष्ठ, भवन, सूप, सभी आवश्यक वस्तुओं में कलात्मकता नजर आती है। यह कलात्मकता किसी वस्तु को न सिर्फ सौंदर्यता प्रदान करती है बल्कि उस वस्तु को सकारात्मकता प्रदान करते हुए सजीव बना देती है, और इस कृत्य में तकनीक एवं प्रयुक्त सामग्री का बड़ा योगदान होता है। यही कारण है कि धार्मिक भावनाओं को आहत किए बिना पौराणिक देवताओं की तस्वीरों या मूर्तियों को समकालीनता प्रदान कर दी जाती है और किसी को तत्काल पता भी नहीं चल पाता है। भारत में मेले और त्यौहार धर्म संस्कृति को बचाने के लिए पारंपरिक तरीकों से मनाए जाते हैं। इन मेलों और त्यौहारों में विभिन्न कलाओं के दर्शन होते हैं। इन मेलों में दिखाई देने वाली कलाओं में एक बड़ा भाग घुमंतू जातियों द्वारा दिखाई जाने वाली कलाओं का भी होता है। नष्त्य, नट के अतिरिक्त कृषि और घरेलू सामानों की बनावट या बुनावट में विभिन्न कलाओं का उपयोग घुमंतू जातियों द्वारा किया जाता है। इस प्रकार की कलाएं सौन्दर्य तो प्रदान करती ही हैं साथ ही लोक अभिव्यक्ति का महत्वपूर्ण साधन भी बनती हैं। जातियों या स्थनीयता के कारण ही भारत में

अनेक कलाओं को उन स्थानों के नाम से जाना है जहां वे उत्पन्न हुई हैं। उदाहरण के लिए महाराष्ट्र के वरली क्षेत्र में विशेष प्रकार की पेंटिंग बनाई जाती है जिसे 'वर्ली पेंटिंग' के रूप में जाना जाता है। कला की यह शैली दिनचर्या, प्रकृतिक और धर्म को विषय बनाकर छवियों का प्रकटन है जिसमें सीधे ज्यामितीय पैटर्न और आकृतियों का उपयोग होता है। यह पेंटिंग प्रायः लाल या गेरू की पृष्ठभूमि पर सफेद रंग से बनाई जाती है। इसी प्रकार बिहार के मधुबनी में जन्मी पेंटिंग को 'मधुबनी पेंटिंग' कहा जाता है। 'मधुबनी पेंटिंग' की भी लोक कला के रूप में विशेष स्थान और पहचान है। यह चित्र प्रायः परिष्कृत ज्यामितीय पैटर्न पर होते हैं और देवी–देवताओं, प्रकृति और दिनचर्या को चमकीले रंगों में दर्शाया जाता है। स्थानीयता के कारण ही मध्य प्रदेश के गोंड क्षेत्र में जनजातीयों द्वारा जिस कला को बनाया जाता है उस कला को 'गोंड पेंटिंग' के रूप में पहचान मिली है। यह कला विस्तृत रूप में नजर आती है, जिसमें प्रायः गोंड लोगों की आध्यात्मिक प्रथाओं, स्थानीय प्रकृति से प्रभावित चित्र होते हैं। यह पेंटिंग चमकीले रंगों में बनाई जाती हैं और उनमें मोटी लाइनें नजर आती हैं। भारतीय कला और संस्कृति की महत्ता को प्रसिद्ध विद्वान वसुदेवशरण अग्रवाल के शब्दों में समझा जा सकता है– ''भारतीय कला की एक विशेषता उसमें अंकित सांस्कृतिक जीवन की सामग्री है। राजा और प्रजा दोनों के ही जीवन का खुलकर चित्रण किया गया है। कला मानों साहित्यिक वर्णनों की व्याख्या प्रस्तुत करती है। कोई चाहे तो कला की सामग्री से ही भारतीय जीवन और रहन–सहन का इतिहास लिख सकता है। भारतीय वेशभूषा, केशविन्यास, आभूषण, शयनासन आदि की सामग्री चित्र, शिल्प आदि में मिलती है। छोटी मिट्टी की मूर्तियां भी इस विषय में सहायक हैं। उनमें तो सामान्य जनता को भी स्थान मिला है। भरहुत, सांची, अमरावती, नागार्जुनकोंडा आदि के महान स्तूपों पर मानों जनता के जीवन की शतसहस्त्री संहिता ही लिखी हुई है। भारतीय कला सदा जीवन को साथ लेकर चली है। अतएव उसमें समसामयिक जन–जीवन का प्रतिबिम्ब पाया जाता है।''[5]

भारतीय संस्कृति

यह सर्वविदित है कि भारतीय संस्कृति विश्व में सबसे प्राचीन संस्कृति है। यह संस्कृति एक दिन में नहीं जन्मी बल्कि इसकी सनातन परंपरा रही है, इसीलिए भारतीय संस्कृति को सनातन संस्कृति भी कहा जाता है। यह संस्कृति अनेक बड़े बाहरी हमले झेलने के कारण विभिन्न धर्मों, समुदायों से प्रभावित है। अपनी तमाम जटिलताओं के बावजूद दुनियाभर में मात्र भारतीय संस्कृति में ही यह गुण है कि यह विभिन्न संस्कृतियों और धर्मों को स्थान देते हुए अपनी क्षमता को ऐसे बढा लेती है कि जो कमियां प्रकट होने लगें वह खूबियों में नजर आने लगती है। यही कारण है कि भारत में निवास करने वाले धर्मों और दुनिया के दूसरे देशों में निवास करने वाले उन्हीं धर्मों की परंपराओं, रहन–सहन और उत्सवों में काफी अन्तर नजर आ जाता है। ये सभी धर्म अपनी मूल संस्कृति को छोड़ते हुए और भारतीय संस्कृति में रंगते हुए नजर आते हैं। यही कारण है कि धार्मिक विविधता के बावजूद भारतीय संस्कृति लगभग पूरे देश में एक जैसी नजर आती है। अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के बावजूद एकदूसरे की भावनाओं को

मान देने की परंपरा मात्र भारत में ही संभव है अन्यथा अन्य देशों में सिर्फ अपने आपको श्रेष्ठ मानने के चक्कर में धार्मिक उन्माद ही देखे जाते हैं। भारत के सभी राज्य और नगर तथा ग्राम अपनी पहचान रखने और बनाने के लिए स्वतंत्र हैं। छोटे–छोटे स्थानों की सांस्कृतिक विरासत को संरक्षित करने में पूरा देश सहयोगी बनता है। यही कारण है कि एक ही देश में होने के बावजूद प्रत्येक राज्य अथवा नगर की विशेष सांस्कृतिक और पारंपरिक पहचान बनी हुई है, वह चाहे पारंपरिक परिधान के रूप में हो अथवा पारंपरिक भोजन के रूप में हो या फिर किसी वस्तु के पारंपरिक निर्माण के रूप में हो सकती है। इन स्थानीयता को भारत के आंचलिकता के रूप में भी जाना जाता है। आंचलिक नृत्य भी आंचलिक पेंटिंग की ही तरह बड़ी कला के रूप में स्थापित हुए हैं, जिनमें पंजाबी भांगड़ा, गुजराती डांडिया, असमी बिहू आदि प्रसिद्ध हैं। इन लोक नृत्यों के माध्यम से लोक का न सिर्फ मनोरंज होता है बल्कि जीवन को और अधिक सुन्दर बनाने की प्रेरणा मिलती है।

भारतीय संस्कृति सर्वाधिक प्राचीन संस्कृति है। जहां तक बात संस्कृति और कला में संबंधों की है तो यह मान लेने में कोई बुराई नहीं है कि ''कला मानव संस्कृति की उपज है। इसका उदय मानव की सौन्दर्य भावना का परिचायक है। इस भावना की वृत्ति व मानसिक विकास के लिए ही विभिन्न कलाओं का विकास हुआ है।''[6] तमाम आक्रमण के बावजूद भारत की संस्कृति अपने परम्परागत अस्तित्व के साथ बनी हुई है। उदारता तथा समन्यवादी गुणों के कारण भारतीय संस्कृति ने अपने अस्तित्व को सुरक्षित रखा है। यह बात सही है कि बाहरी आक्रमणों से भारतीय जनजीवन को बहुत अधिक हानि हुई है। तमाम भवन और मन्दिर तोड़े गए जहां भारतीय कलाओं को संजोकर रखा गया था। कई स्थानों को दैवीय आपदाओं के कारण मार झेलनी पड़ी है। परंतु इन सबके बावजूद आज भी भारतीय संस्कृति समाप्त नहीं हो सकी है। भारत के विभिन्न भागों में पुरातात्विक खुदाई में मृदभांड, शैलचित्र, मूर्तियां आदि सामग्री प्राप्त हो ही जाती हैं। सिन्धु घाटी की सभ्यता से प्राप्त सामग्री के विवरणों से प्रमाण मिलता है कि यह सभ्यता लगभग पाँच हजार वर्ष पूर्व की विकसित संस्कृति वाली सभ्यता थी।

भारतीय कला, संस्कृति और धर्म

भारतीय संस्कृति में नदियों, वृक्षों, ग्रहों, आदि को इतना महत्व दिया जाता है कि सभी की पूजा अर्चना के लिए विशेष अवसर का प्रावधान है। भारतीय संस्कृति व्यक्तिगत न होकर सामूहिक है। यहां की परंपराएं और रीति–रिवाज आपसी विश्वास और नैतिक मूल्यों पर आधारित हैं, जिसमें परसेवा और परोपकारिता की भावना विद्यमान है। धर्म भारतीय संस्कृति का महत्वपूर्ण भाग है, जिसका पालन किसी न किसी रूप में किया ही जाता है। कला–संस्कृति और धर्म को वासुदेवशरण अग्रवाल ने सहज ढंग से समझाया है– ''देश में समय–समय पर जो महान धार्मिक आन्दोलन हुए हैं और जिन्होंने लोकजीवन पर गहरा प्रभाव डाला उनसे भी कला को प्रेरणा मिली और उनकी कथा कला के मूर्त रूपों में सुरक्षित है। इस विषय में कला की सामग्री कहीं साहित्य से भी अधिक सहायक है। यक्षों और नागों का बहुत अच्छा परिचय भरहुत, सांची और मथुरा की कला में मिलता है। इसी प्रकार उत्तरकुरु के विषय में जो लोकविश्वास

था उसका भी उत्साहपूर्ण अंकन भाजा, भरहुत, सांची आदि में हुआ है। मिथुन, कल्पवृक्ष कल्पलता आदि अलंकरण उसी से सम्बन्धित हैं जिनका वर्णन जातक, रामायाण, महाभारत आदि में आया है। दुकुल वस्त्र, पनसाकृति पात्रों में भरा हुआ उत्तम मधु, आम्राकृति पात्रों में भरा हुआ लाक्षारस, सिर, कान, ग्रीवा, बाहु और पैरों के आभूषण, एवं स्त्री–पुरुषों की मिथुन–मूर्तियां कृ सबका जन्म कल्पवृक्ष और कल्पलताओं से दिखाया गया है। वस्तुतः प्रत्येक व्यक्ति का समस्त जीवन ही एक कल्पवृक्ष है जिसकी छाया में वह अपनी इच्छा के अनुसार फूलता फलता है। प्रत्येक का मन ही महान कल्पवृक्ष है, कल्पना या संकल्प जिसका सुन्दर रस है।''[7] भारतीय कला में धार्मिकता नजर आना स्वाभाविक है। भारतीय संस्कृति धर्म के बिना अधूरी है और बिना कला के संस्कृति। यही कारण है कि ''भारतीय कलाकार सम्पूर्ण चेतन तथा अचेतन को सृष्टि का अंग मानता है।''[8] इस प्रकार देखा जाए तो भारतीय संस्कृति और कला से धर्म को अलग करना ठीक वैसे ही है जैसे कि शरीर से आत्मा को अलग करना।

निष्कर्ष

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि भारत के महान बनने में भारत की संस्कृति, कला और धर्म का बड़ा योगदान है। ऐसा प्रतीत होता है कि संस्कृति, कला और धर्म ही भारत की आत्मा है जो भारत रूपी शरीर में वास करती है। तमाम आक्रमणों के बावजूद भारत अपनी मौलिकता को बचाए रखने में सफल रहा है। यहां तक कि जो लोग कलाप्रेमी नहीं थे भारत आकर उनमें भी कला के प्रति प्रेम की जाग्रति हुई है। भारत का ऐसा कोई स्थान नहीं है जहां व्यक्ति निवास करता हो और कोई कला न हो। परंपराओं और रीति–रिवाजों के रूप में भी परंपरागत कलाएं जीवित हैं। भारत में कला कभी मर नहीं सकती बल्कि उसका रूप लावण्य सदैव बना रहेगा। खास बात यह है कि आधुनिकता की दौड़ के बावजूद भारतीय कलाओं का सौन्दर्य कभी फीका नहीं हुआ है।

संदर्भ

1. भारतीय चित्रकला की रूपरेखा, आर. एन. टन्डन, भारत भारती प्रकाशन, वैस्टर्न कचहरी रोड मेरठ, चुतुर्थ संस्करण 1973, भूमिका
2. भारतीय चित्रकला की रूपरेखा, आर. एन. टन्डन, भारत भारती प्रकाशन, वैस्टर्न कचहरी रोड मेरठ, चुतुर्थ संस्करण 1973, पृ0 1
3. भारतीय चित्रकला की रूपरेखा, आर. एन. टन्डन, भारत भारती प्रकाशन, वैस्टर्न कचहरी रोड मेरठ, चुतुर्थ संस्करण 1973, पृ0 34
4. शिक्षा का वाहन कला, देवी प्रसाद, नेशनल बुक ट्रस्ट इंडिया, प्रथम संस्करण चौथी आवर्षत्ति, 2005, पृ0 23
5. वसुदेवशरण अग्रवाल, भारतीय कला, पृथिवी प्रकाशन वाराणसी, प्रथमम संस्करण 1966 पृ0 6
6. डॉ. रीता प्रताप, भारतीय चित्रकला एवं मूर्तिकला का इतिहास, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर, तीसरा संस्करण 2008, पृ0 7

7. वसुदेवशरण अग्रवाल, भारतीय कला, पृथिवी प्रकाशन वाराणसी, प्रथमम संस्करण 1966 पृ0 6
8. डॉ. अविनाश बहादुर वर्मा/अनिल वर्मा, संगीता वर्मा, भारतीय चित्रकला इतिहास, प्रकाशक प्रकाश बुक डिपो, बरेली, प्रथम संस्करण 2016, पृ0 6